समकालीन हिन्दी नाटक और सत्ता-विमर्श: कौटिल्यीय सप्तांग सिद्धांत के आलोक में एक विश्लेषण

एस. रंजीता

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, मानविकी एवं भाषा संकाय, कर्नाटक केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कलबुरगी, कर्नाटक.

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.18790988

ABSTRACT:

साहित्य और समाज का संबंध सदैव अन्योन्याश्रित रहा है, जहाँ नाटक अपनी दृश्य-श्रव्य प्रकृति के कारण सामाजिक-राजनैतिक विसंगतियों को सर्वाधिक प्रखरता से अभिव्यक्त करता है। 21वीं सदी का हिन्दी नाटक वैश्वीकरण, बाज़ारवाद और जटिल राजनैतिक परिवेश के बीच सत्ता की बदलती प्रवृत्तियों को रेखांकित कर रहा है। आचार्य कौटिल्य ने 'अर्थशास्त्र' में राज्य के सुचारू संचालन हेतु 'सप्तांग सिद्धांत' (स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश, दण्ड और मित्र) का प्रतिपादन किया था, जो सदियों तक सत्ता-संरचना का आधार बना रहा।

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य कौटिल्यीय सप्तांग सिद्धांत के निकष पर 21वीं सदी के चयनित हिन्दी नाटकों में सत्ता-संरचना के विखंडन का विश्लेषण करना है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जब लोकतंत्र के विभिन्न स्तंभ और सत्ता के पारंपरिक अंग क्षरित हो रहे हैं, तब नाटककार इन प्राचीन सिद्धांतों के टूटने और उनके नए, विकृत रूपों को रंगमंच पर प्रस्तुत कर रहे हैं। शोध पत्र इस बात की पड़ताल करता है कि आधुनिक नाटकों में 'स्वामी' (शासक) की नैतिकता, 'अमात्य' (प्रशासन) की कार्यकुशलता और 'जनपद' (जनता) की स्थिति कौटिल्य के आदर्शों से किस प्रकार विमुख हुई है।

विश्लेषण के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि समकालीन नाटक सत्ता के केंद्रीकरण के विरुद्ध एक प्रति-विमर्श खड़ा करते हैं। यह अध्ययन न केवल साहित्यिक प्रवृत्तियों को समझने में सहायक है, बल्कि सत्ता और समाज के द्वंद्वात्मक संबंधों पर एक नवीन सांस्कृतिक दृष्टि भी प्रदान करता है। निष्कर्षतः, यह शोध पत्र पारंपरिक राजनैतिक दर्शन और आधुनिक नाट्य-चेतना के बीच एक तुलनात्मक सेतु स्थापित करने का प्रयास है।

KEYWORDS:

सप्तांग सिद्धांत, सत्ता-विमर्श, समकालीन हिन्दी नाटक, सत्ता-विखंडन, राजनैतिक चेतना।

प्रस्तावना

21वीं सदी का वैश्विक परिदृश्य राजनैतिक उथल-पुथल, सूचना क्रांति और सत्ता के बदलते स्वरूपों का गवाह रहा है। इस युग में 'सत्ता' केवल शासन करने की एक वैधानिक शक्ति मात्र नहीं है, बल्कि यह विमर्शों, प्रतीकों और नियंत्रण की एक सूक्ष्म प्रक्रिया बन गई है। समकालीन हिन्दी नाटक अपनी विकास यात्रा में निरंतर सत्ता की इन परतों को उघाड़ने का कार्य कर रहा है। भारतेन्दु और प्रसाद की समृद्ध नाट्य परंपरा को आगे बढ़ाते हुए 21वीं सदी के नाटककार इतिहास, मिथक और समकालीन यथार्थ के माध्यम से सत्ता की निरंकुशता और मानवीय मूल्यों के क्षरण को रेखांकित कर रहे हैं।

वर्तमान शोध की प्रासंगिकता इस बिंदु पर है कि हम प्राचीन भारतीय राजनैतिक दर्शन के स्तंभ 'आचार्य कौटिल्य' के 'सप्तांग सिद्धांत' को निकष बनाकर आधुनिक नाट्य-साहित्य का विश्लेषण करें। कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' राज्य को एक जीवित अंगी मानता है, जिसके सात अंग राज्य की स्थिरता सुनिश्चित करते हैं। किंतु समकालीन नाटकों को देखने पर ज्ञात होता है कि सत्ता के ये सातों अंग आज 'विखंडन' की प्रक्रिया से गुजर रहे हैं। कौटिल्य ने जिस 'स्वामी' की कल्पना प्रजापालक के रूप में की थी, वह आज आत्ममुग्ध तानाशाह में बदल गया है; जो 'अमात्य' राज्य की आँखें थे, वे अब भ्रष्टाचार का काला चश्मा पहन चुके हैं। यह शोध आलेख इन्हीं विसंगतियों को 21वीं सदी के चयनित नाटकों के माध्यम से उजागर करने का प्रयास है।

कौटिल्य का सप्तांग सिद्धांत: एक सैद्धांतिक आधार

कौटिल्य ने राज्य के सुचारू संचालन के लिए 'सप्तांग' की अवधारणा दी थी। उनके अनुसार राज्य एक रथ के समान है जो सात अंगों के सहयोग के बिना नहीं चल सकता:

1. स्वामी (राजा/शासक): राज्य का शीर्ष, जिसमें बौद्धिक और नैतिक गुण अनिवार्य हैं।
2. अमात्य (मंत्री/प्रशासन): राजा की कार्यक्षमता को बढ़ाने वाले योग्य अधिकारी।
3. जनपद (क्षेत्र और जनता): राज्य का भौतिक आधार, जिसमें भूमि और प्रजा दोनों समाहित हैं।
4. दुर्ग (किलेबंदी/रक्षा): बाहरी आक्रमणों से सुरक्षा के लिए मजबूत

रक्षा तंत्र।

5. कोश (राजस्व): आर्थिक मजबूती, जो प्रजा के कल्याण और सुरक्षा के लिए संचित हो।
6. दण्ड (न्याय और सेना): कानून का पालन सुनिश्चित करने वाली व्यवस्था।
7. मित्र (सहयोगी): विपत्ति के समय साथ देने वाले पड़ोसी राज्य।

कौटिल्य का मानना था कि “यथा राजा तथा प्रजा”, अर्थात राज्य का स्वरूप राजा के चरित्र पर निर्भर करता है। सप्तांग का संतुलन ही ‘योगक्षेम’ (प्रजा का कल्याण) की प्राप्ति का मार्ग है।

21वीं सदी का हिन्दी नाटक: संवेदना

21वीं सदी के हिन्दी नाटक में ‘सत्ता’ एक केंद्रीय संवेदना के रूप में मौजूद है। आज का नाटककार कौतूहल पैदा करने के बजाय वैचारिक द्वंद्व पैदा कर रहा है। यहाँ इतिहास केवल अतीत की गौरवगाथा नहीं है, बल्कि वर्तमान की विडंबनाओं को समझने का औजार है। हृषीकेश सुलभ, असग़र वजाहत, दयाप्रकाश सिन्हा और मीरा कांत जैसे रचनाकारों ने सत्ता के उन पहलुओं को छुआ है जहाँ मानवीय अस्मिता और राजनैतिक महत्वाकांक्षा के बीच संघर्ष होता है। इन नाटकों में बाज़ारवाद, संप्रदायवाद और लोकतांत्रिक मूल्यों के ह्रास जैसी ‘उभरती प्रवृत्तियाँ’ स्पष्ट दिखाई देती हैं।

चयनित नाटकों में सत्ता-विमर्श का विश्लेषण: सप्तांग के निकष पर

1. शासक का चारित्रिक पतन (स्वामी)

कौटिल्य का ‘स्वामी’ प्रजा के सुख को अपना सुख मानता है। किंतु समकालीन नाटकों में ‘स्वामी’ का चरित्र सत्ता की लोलुपता और आत्ममुग्धता से ग्रस्त है। दयाप्रकाश सिन्हा का ‘सम्राट अशोक’ (2015) सत्ता प्राप्ति के लिए की गई हिंसा और उसके बाद के मानसिक द्वंद्व को दिखाता है। अशोक कहता है— “सत्ता का मार्ग करुणा से नहीं, क्रूरता की सीढ़ियों से होकर जाता है।” यहाँ ‘स्वामी’ का आदर्श रूप तब विखंडित होता है जब वह अपने ही भाइयों का रक्त बहाकर सिंहासन प्राप्त करता है। व्रात्य बसु का ‘मीरज़ाफ़र’ (2022) सत्ता के लिए किए जाने वाले ‘विश्वासघात’ का दस्तावेज़ है। मीरज़ाफ़र का चरित्र कौटिल्य के ‘स्वामी’ के उन गुणों (निष्ठा, त्याग) का पूर्णतः अभाव दिखाता है जो राज्य को स्थायित्व देते हैं। सत्ता यहाँ केवल एक सौदेबाजी है। असग़र वजाहत के

'महाबली' (2019) में अकबर की सत्ता और तुलसीदास की आध्यात्मिक स्वायत्तता का संघर्ष यह दर्शाता है कि आधुनिक स्वामी वैचारिक स्वतंत्रता से भयभीत रहता है।

2. प्रशासनिक तंत्र की विफलता (अमात्य)

कौटिल्य के अनुसार 'अमात्य' योग्य और ईमानदार होने चाहिए, क्योंकि प्रशासन ही जनता और राजा के बीच की कड़ी है। रवींद्र भारती का 'जनवासा' (2005) और हृषीकेश सुलभ का 'अमली' (2010) नौकरशाही के उस वीभत्स चेहरे को दिखाते हैं जहाँ आम आदमी केवल एक 'फ़ाइल' बनकर रह जाता है। 'अमली' में पुलिस प्रशासन की क्रूरता सप्तांग के 'अमात्य' अंग के सड़ जाने का प्रतीक है। नाटक का एक पात्र कहता है— "साहब! यहाँ न्याय नहीं, केवल आज्ञा का पालन होता है।" यह संवाद दर्शाता है कि प्रशासनिक अंग अब लोकहितकारी न होकर सत्ता के दमनकारी औज़ार बन गए हैं।

3. जनता की उपेक्षा और पहचान का संकट (जनपद)

कौटिल्य का 'जनपद' समृद्ध और संतुष्ट होना चाहिए। लेकिन 21वीं सदी के नाटकों में जनता हाशिए पर है। मीरा कांत का 'काली बर्फ' (2006) विस्थापन की त्रासदी का नाटक है। कश्मीर के संदर्भ में यह नाटक दिखाता है कि जब 'जनपद' अपनी ही भूमि से उखड़ जाता है, तो राज्य का आधार ही ढह जाता है। जयवर्धन का 'किस्सा मौजपुर का' (2014) आधुनिक राजनीति में आम आदमी की स्थिति को व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। यहाँ जनता केवल चुनाव के समय याद किया जाने वाला एक आंकड़ा है। नाटक का संवाद है— "मौजपुर की मौज केवल नारों में है, लोगों के चूल्हे में नहीं।"

4. आधुनिक दुर्ग और वैचारिक घेराबंदी (दुर्ग)

कौटिल्य के अनुसार 'दुर्ग' राज्य की रक्षात्मक शक्ति का प्रतीक है, जो केवल ईंट-पत्थर की दीवारें नहीं, बल्कि राज्य की सुरक्षा की अभेद्यता है। 21वीं सदी के नाटकों में 'दुर्ग' का स्वरूप भौतिक से अधिक वैचारिक और तकनीकी हो गया है। अभिषेक मजूमदार का 'तथागत' (2024) इस बात का प्रबल उदाहरण है कि आधुनिक सत्ता कैसे 'दुर्ग' के नाम पर वैचारिक घेराबंदी करती है। इसमें दिखाया गया है कि कैसे सत्ता के विरुद्ध उठने वाले हर विचार को दुर्ग की सुरक्षा के लिए खतरा मानकर उसे बाहर कर दिया जाता है। दयाप्रकाश सिन्हा के 'रक्त अभिषेक' (2006) में मगध के दुर्ग की सुरक्षा के पीछे जो षड्यंत्र और रक्तपात है,

वह दर्शाता है कि सत्ता के रक्षक ही अक्सर उसके सबसे बड़े भक्षक बन जाते हैं। वर्तमान दौर में 'डिजिटल सर्विलांस' और 'सोशल मीडिया' सत्ता के वे नए दुर्ग हैं, जहाँ से जनता की सोच पर पहरा बिठाया जाता है। 'किस्सा मौजपुर का' में सत्ता का दुर्ग आम आदमी के लिए इतना ऊँचा है कि उसकी आवाज़ व्यवस्था की दीवारों को पार नहीं कर पाती।

5. आर्थिक विषमता और राजकोष का दोहन (कोश)

कौटिल्य के अनुसार 'कोश' (राजस्व) धर्मपूर्वक अर्जित किया जाना चाहिए और उसका उपयोग प्रजा के कल्याण हेतु होना चाहिए। किंतु समकालीन नाटक राजकोष के नैतिक पतन की कथा कहते हैं। मधू धवन का 'आज की पुकार' (2013) बाज़ारवाद और उपभोक्तावाद के उस संकट को दिखाता है जहाँ 'कोश' की वृद्धि ही राज्य का एकमात्र लक्ष्य बन गई है, चाहे इसके लिए मानवीय मूल्यों की बलि ही क्यों न देनी पड़े। रवींद्र भारती का 'जनवासा' (2005) शासन तंत्र में व्याप्त उस भ्रष्टाचार को बेनकाब करता है जहाँ राजकोष का धन जनहित में न लगकर बिचौलियों की जेबों में जाता है। नाटक का एक मर्मस्पर्शी संवाद है— "सरकारी खजाने की चाबी जिनके पास है, उनके घरों के दरवाज़े सोने के हो गए हैं और जनता की झोपड़ियाँ मिट्टी में मिल रही हैं।" यह कौटिल्य के उस आदर्श 'कोश' का पूर्ण विखंडन है जो अकाल और विपत्ति में जनता का सहारा होता था।

6. न्याय का संकट और दमनकारी तंत्र (दण्ड)

'दण्ड' का अर्थ कौटिल्य की दृष्टि में 'न्याय' और 'अनुशासन' था, जो न तो अत्यधिक कठोर हो और न ही अत्यधिक कोमल। किंतु 21वीं सदी के नाटकों में 'दण्ड' न्याय का नहीं, बल्कि दमन का पर्याय बन गया है। हृषीकेश सुलभ का 'अमली' (2010) व्यवस्था की उस क्रूरता का साक्षात प्रमाण है जहाँ कानून का रक्षक ही शोषक बन जाता है। 'अमली' में दिखाया गया 'दण्ड' केवल गरीब और असहाय पर चलता है। वहीं अभिषेक मजूमदार के 'तथागत' में 'राजद्रोह' के कानून का भय दिखाकर सत्ता अपनी कमियों को छिपाती है। यहाँ दण्ड का उद्देश्य सुधार नहीं, बल्कि भय व्याप्त करना है। दयाप्रकाश सिन्हा के 'सम्राट अशोक' में अशोक का 'चण्ड' रूप सप्तांग के दण्ड विधान के उस विकृत रूप को दिखाता है जहाँ न्याय केवल राजा की सनक पर निर्भर है। संवाद गूँजता है— "न्याय वह है जो सम्राट की इच्छा है।" यह विखंडन आधुनिक लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ी चेतावनी है।

7. वैचारिक गठबंधन और अदृश्य शक्तियाँ (मित्र)

सप्तांग सिद्धांत का सातवाँ अंग 'मित्र' राज्य की बाहरी शक्ति और सहयोग का प्रतीक है। समकालीन नाटकों में 'मित्र' की अवधारणा पूर्णतः बदल चुकी है। व्रात्य बसु का 'मीरज़ाफ़र' (2022) दिखाता है कि कैसे विदेशी 'मित्र' (ईस्ट इंडिया कंपनी) के साथ किया गया गठबंधन राष्ट्र की संप्रभुता को लील जाता है। यहाँ मित्र कोई सहयोगी नहीं, बल्कि अवसरवादी शक्ति है। असग़र वजाहत के 'गोडसे@गांधी.कॉम' (2012) में वैचारिक 'मित्रों' और शत्रुओं के बीच का द्वंद्व है। आज के नाटकों में 'मित्र' केवल पड़ोसी राज्य नहीं हैं, बल्कि वे वैश्विक कॉर्पोरेट शक्तियाँ और बाज़ार के हितैषी हैं जो पर्दे के पीछे से सत्ता का संचालन करते हैं। असग़र वजाहत के 'महाबली' में सत्ता (अकबर) और सृजन (तुलसी) के बीच जो मित्रता का प्रयास है, वह वास्तव में सत्ता द्वारा कला को पालतू बनाने की कोशिश है। जब सत्ता का 'मित्र' केवल स्वार्थ पर आधारित हो, तो सप्तांग संरचना ताश के पत्तों की तरह ढह जाती है।

सत्ता-संरचना का विखंडन: एक तुलनात्मक विश्लेषण

समकालीन हिन्दी नाटकों में सत्ता के सप्त अंगों का विखंडन निम्नलिखित तालिका के माध्यम से समझा जा सकता है:

सप्तांग अंग	कौटलि्यीय आदर्श स्वरूप	21वीं सदी के नाटकों में वखिंडन (यथार्थ)	उदाहरण (नाटक)
स्वामी	प्रजा के हति में समर्पति, नीतवािन	सत्तालोलुप, वशि्वासघाती, तानाशाह	मीरज़ाफ़र, सम्राट अशोक
अमात्य	योग्य, ईमानदार, राज्य का रक्षक	भ्रष्ट, चाटुकार, व्यवस्था का गुलाम	अमली, जनवासा
जनपद	संतुष्ट प्रजा, उर्वर भूमि	वस्थिापति, शोषति, पहचान का संकट	काली बर्फ, कस्सिा मौजपुर का
दुर्ग	बाहरी शत्रुओं से सुरक्षा	आंतरकि वरिोधियों और वचिारों पर पहरा	तथागत, रक्त अभषिक

कोश	लोक-कल्याण हेतु राजस्व संग्रह	नजी स्वार्थ और बाज़ारवादी लूट	आज की पुकार
दण्ड	नष्पिक्ष न्याय और व्यवस्था	दमन का हथयिार, 'राष्ट्रद्रोह' का लेप	तथागत, अमली
मति्र	संकट में सहायक पड़ोसी	अदृश्य शक्तयिाँ (कॉर्पोरेट/बाहरी हति)	गोडसे@गांधी.कॉम

विखंडन के कारण: बाज़ारवाद और नैतिक ह्रास

21वीं सदी में सत्ता के इस विखंडन के तीन प्रमुख कारण उभर कर सामने आते हैं। प्रथम, बाज़ारवाद: आज ‘कोश’ और ‘स्वामी’ दोनों बाज़ार के अधीन हैं। ‘आज की पुकार’ जैसे नाटक दिखाते हैं कि कैसे आर्थिक लाभ के लिए मानवीय संबंधों और राज्य की नैतिकता की बलि दी जा रही है। द्वितीय, विचारधारात्मक कट्टरता: ‘गोडसे@गांधी.कॉम’ और ‘तथागत’ यह स्पष्ट करते हैं कि सत्ता अब जनता के शरीर पर नहीं, बल्कि उसके विचारों पर नियंत्रण चाहती है। तृतीय, संस्थानों का पतन: कौटिल्य का ‘अमात्य’ और ‘दण्ड’ स्वतंत्र और निष्पक्ष थे, किंतु आधुनिक नाटकों (जैसे ‘जनवासा’) में ये अंग कैंसर की तरह सड़ चुके हैं। हृषीकेश सुलभ के शब्दों में— “सत्ता का स्वभाव ही है कि वह हर उस आवाज़ को खामोश कर दे जो उसे आईना दिखाए।” यह 21वीं सदी के नाटकों का मूल स्वर है, जो कौटिल्य के सप्तांगों के टूटने की गवाही देता है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि 21वीं सदी के हिन्दी नाटक कौटिल्य के सप्तांग सिद्धांत के एक नए और जटिल भाष्य के रूप में सामने आए हैं। जहाँ कौटिल्य ने राज्य के एक सुगठित और संतुलित ढांचे की कल्पना की थी, समकालीन नाटककार उस ढांचे के भीतर व्याप्त सड़ांध और विखंडन को उजागर कर रहे हैं। इन नाटकों में सत्ता अब प्रजा की रक्षक न होकर एक ऐसी मशीन बन गई है जो मनुष्य को निगल रही है। कौटिल्य का सिद्धांत आज भी एक ‘निकष’ के रूप में प्रासंगिक है, क्योंकि यह हमें वह आदर्श पैमाना प्रदान करता है जिससे हम आधुनिक सत्ता की विफलताओं को माप सकें। चयनित नाटक यह सिद्ध करते हैं कि रंगमंच केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि राजनैतिक चेतना का

एक जीवंत माध्यम है। ये नाटक हमें सचेत करते हैं कि यदि सप्तांग के ये अंग इसी तरह विखंडित होते रहे, तो राज्य का पतन निश्चित है। निष्कर्षतः, 21वीं सदी के हिन्दी नाटक सप्तांग सिद्धांत के प्रकाश में सत्ता की अनैतिकता को बेनकाब करते हुए एक अधिक मानवीय और न्यायपूर्ण व्यवस्था की पुकार करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. रवींद्र भारती - "जनवासा", राधाकृष्ण प्रकाशन, 2005
2. दयाप्रकाश सिन्हा - "रक्त अभिषेक", अनिल प्रकाशन, 2006
3. मीरा कान्त - "काली बर्फ", वाणी प्रकाशन, 2006
4. हृषीकेश सुलभ - "अमली", राजकमल प्रकाशन, 2010
5. असग़र वजाहत - "गोडसे@गांधी.कॉम", वाणी प्रकाशन, 2012
6. मधू धवन - "आज की पुकार", वाणी प्रकाशन, 2013
7. जयवर्धन - "किस्सा मौजपुर का", अमरसत्य प्रकाशन, 2014
8. दयाप्रकाश सिन्हा - "सम्राट अशोक", वाणी प्रकाशन, 2015
9. असग़र वजाहत - "महाबली", राजपाल एण्ड संस, 2019
10. व्रात्य बसु - "मीरज़ाफ़र", राजकमल प्रकाशन, 2022
11. अभिषेक मजूमदार - "तथागत", लेफ्टवर्ड बुक्स, 2024
12. अर्थशास्त्र, कौटिल्य, (अनुवाद: वाचस्पति गैरोला), चौखम्भा विद्याभवन
13. हिंदी नाटक: इतिहास-दृष्टि और समकालीन-बोध, डॉ. प्रभात शर्मा, संजय प्रकाशन